मन्त्रों के संस्कार एवं दीपस्थान

नारदमहापुराण(पूर्वभाग अध्याय 64) में मन्त्रों के छिन्न, रुद्ध, शक्तिहीन, पराङ्गमुख, कर्णहीन, नेत्रहीन, कीलित, स्तम्भित, दग्ध, त्रस्त, आदि 49 दोष बताये गये हैं। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार सात करोड़ मन्त्र हैं। ये मन्त्र इन दोषों में से किसी न किसी से ग्रस्त पाये जाते हैं। अत: ऐसी स्थिति में शास्त्रों ने इन दोषों से मुक्ति के लिये उपाय बताये हैं। क्योंकि दोषों के रहते हुए मन्त्र का जप अपेक्षित सिद्धि नहीं प्रदान कर सकता।

दोषानिमानविज्ञाय यो मन्त्रान् भजते जडः।
सिद्धिर्न जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि।। (पुरश्चर्यार्णव पृ. 92)

नारदमहापुराण(पूर्वभाग अध्याय 64) में 'छिन्न' आदि दोषों से दूषित मन्त्रों का बहुत ही आसान साधन बताया गया है। वहाँ कहा गया है कि "जो योनिमुद्रासन से बैठकर एकाग्रचित्त हो जिस किसी भी(दोष से दूषित) मन्त्र का जप करता है, उसे सब प्रकार की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। बायें पैर की एड़ी को गुदा के सहारे रखकर दाहिने पैर की एड़ी को ध्वज(लिंग) के ऊपर रक्खे तो इस प्रकार योनिमुद्राबन्ध नामक उत्तम आसन होता है।" अर्थात् योनिमुद्रासन से मन्त्र जप करने से उसके सारे दोष दूर हो जाते हैं। इसीलिये इस आसन को सिद्धासन भी कहते हैं। अर्थात् जो आसन सिद्धि प्रदान करे, उसे सिद्धासन कहते हैं।

मन्त्रों के दसविध संस्कार

उपर्युक्त दोषों को दूर करने के लिये शास्त्रों ने दूसरा तरीका संस्कार का बताया है। अर्थात् मन्त्रों को संस्कारित करके जपना। मन्त्रों के दस प्रकार के संस्कार बताये गये हैं-

मन्त्राणां दश कथ्यन्ते संस्काराः सिद्धिदायिनः।
जननं जीवनं पश्चात्ताडनं बोधनं तथा।।
अथाभिषेको विमलीकरणाप्यायने पुनः।
तर्पणं दीपनं गुप्तिर्दशैता मन्त्रसंस्क्रियाः।।

(अनुष्ठानप्रकाशः पृ. 37 तथा पुरश्चर्यार्णव पृ. 92)

अर्थात्-जनन, दीपन, बोधन, ताडन, अभिषेक, विमलीकरण, जीवन, तर्पण, गोपन और आप्यायन- मन्त्रों के ये दस संस्कार हैं। अब इन संस्कारों की संक्षिप्त विधि नीचे दी जा रही है।

भोजपत्र पर गोरोचन, कुंकुम, चन्दनादि से आत्माभिमुख त्रिकोण बनायें। फिर तीनों कोणों में छ:-छ: समानान्तर रेखाएँ खींचे। ऐसा करने पर 49 छोटे-छोटे त्रिकोण(त्रिभुज) बनेंगे, उनमें ईशान-कोण से मातृका वर्ण लिखना शुरू करें और 'अ से ओ' तक लिखने के बाद पुन: नीचे से 'औ से ज' तक लिखें। तदनन्तर ऊपर से नीचे की ओर और पुन: नीचे से ऊपर की ओर मातृका वर्णों को

लिखते जायँ। जब सभी मातृका वर्ण 'अ से ह' तक लिख जायँ तो वहाँ पर मन्त्र के देवता[1] का आवाहन-पूजन करके मन्त्र का एक-एक वर्ण उद्धार करके अलग पत्र पर लिखें। ऐसा करने का नाम 'जनन' नामक संस्कार कहलाता है। निम्नलिखित चित्र से उपर्युक्त यन्त्र का स्वरूप स्पष्ट हो जायगा। मन्त्रोद्धार के पश्चात् यन्त्र को धोकर शुद्ध जल में डाल दें अर्थात् प्रवाहित कर दें।

मन्त्रों के जनन संस्कार का यन्त्र

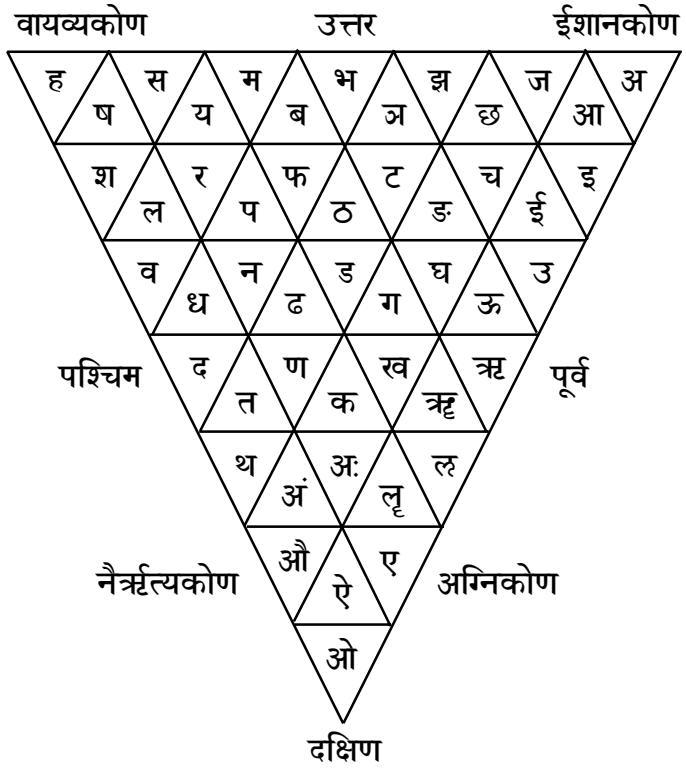

जब जप्यमन्त्र को **हंस** मन्त्र से सम्पुटित करके एक हजार बार जप कर लिया जाय तो वह मन्त्र का 'दीपन' नामक संस्कार कहलाता है। उदाहरण के लिये जप्यमन्त्र **'ॐ नमः शिवाय'** को लें। जब हम **'हंसः ॐ नमः शिवाय सोऽहं'** इस प्रकार से 10 माला जप कर लें तो दीपन नामक संस्कार पूरा हो जायगा।(**जपो हंसपुटस्यास्य सहस्रं दीपनं स्मृतम्।** मन्त्रमहोदधिः 24/102)

जब **ह्रूँ**-बीज-सम्पुटित मन्त्र का पाँच हजार जप कर लें तो वह बोधन नामक संस्कार

1. मन्त्रमहोदधिः के अनुसार मातृका देवी का आवाहन-पूजन करके मन्त्र के एक-एक वर्ण का उद्धार करना चाहिये। (देखें मन्त्रमहोदधिः 24/101)

कहलाता है(मन्त्रमहोदधिः 24/102) जैसे-**'हूँ ॐ नमः शिवाय हूँ'** का 5000 जप कर लेने पर **'ॐ नमः शिवाय'** मन्त्र का बोधन नामक संस्कार संपन्न हो जाता है। **'फट्'**-सम्पुटित मन्त्र का एक हजार जप करने से 'ताड़न' नामक संस्कार होता है। जैसे-**'फट् ॐ नमः शिवाय फट्'**।

जब भोजपत्र पर जप्य-मन्त्र को लिखकर **'ऐं हंसः ओं'** इस मन्त्र द्वारा एक हजार बार अभिमन्त्रित जल से अश्वत्थपत्रादि द्वारा इसी मन्त्र से जप्य-मन्त्र का अभिषेक किया जाय तो वह अभिषेक नामक संस्कार कहलाता है। **'ओं त्रों वषट्'** इन वर्णों से सम्पुटित मन्त्र का एक हजार जप करने से 'विमलीकरण' नामक संस्कार होता है। जैसे- **'ओं त्रों वषट् ॐ नमः शिवाय वषट् त्रों ओं'** का एक हजार बार जप करने से **'ॐ नमः शिवाय'** मन्त्र का विमलीकरण संस्कार पूरा होगा। इसी प्रकार **'स्वधा वषट्'**- सम्पुटित मूलमन्त्र का एक हजार जप करने से 'जीवन' नामक संस्कार होता है। जैसे-**'स्वधा वषट् ॐ नमः शिवाय वषट् स्वधा।'**

दुग्ध, जल एवं घृत के द्वारा मूलमन्त्र से सौ बार तर्पण करने से 'तर्पण' नामक संस्कार पूरा होता है। उदाहरणके लिये **'ॐ नमः शिवाय'** मन्त्र का तर्पण संस्कार करने के लिये इस मन्त्र को गोरोचन आदि से ताड़पत्र पर लिखकर दूध, घी एवं जल से इसी मन्त्र से इसका सौ बार तर्पण करना चाहिये।

'ह्रीं'-बीज-सम्पुटित मूलमन्त्र का एक हजार जप करने से **'गोपन'** नामक संस्कार होता है। जैसे-**'ह्रीं ॐ नमः शिवाय ह्रीं।'** **'ह्रौं'**-बीज-सम्पुटित[1] कर मन्त्र का एक हजार जप करने से **'आप्यायन'** नामक संस्कार होता है। जैसे- **'ह्रौं ॐ नमः शिवाय ह्रौं।'**

उपर्युक्त प्रकार से संस्कृत किया हुआ मन्त्र शीघ्र सिद्धिप्रद होता है। तन्त्र ग्रन्थों में उपर्युक्त संस्कारों की अलग-अलग विधियाँ पायी जाती हैं। साधक अपनी सुविधा के अनुसार किसी भी विधि का प्रयोग कर सकते हैं।

दीपस्थान का विचार

जप आदि किसी भी धार्मिक अनुष्ठान में दीप का स्थान निर्धारित करना आवश्यक माना गया है। क्योंकि शास्त्रों में कहा गया है कि-

दीपस्थानं समाश्रित्य कृतं कर्म्म फलप्रदम्।

(अनुष्ठानप्रकाशः पृ. 36 तथा पुरश्चर्यार्णव पृ. 478)

मन्त्रों की सिद्धि के लिये दीपस्थान का बहुत ही महत्त्व स्वीकार किया गया है। क्योंकि इसके बिना मन्त्र की सिद्धि होनी कठिन है। दीपस्थान निर्धारण के लिये कूर्मचक्र का प्रयोग किया जाता

1. मन्त्रमहोदधिः में **'ह्रौं'** की जगह **'ह्सौः'** बीज से सम्पुटित करने को कहा गया है।(मन्त्रमहोदधिः 24/107)

है। कूर्मचक्र के निर्माण की विधि इस प्रकार है–

जिस स्थान में, क्षेत्र में, नगर में अथवा गृह में पुरश्चरण करना हो उसके नौ समान भाग कल्पना करके मध्यभाग में निम्नलिखित रूप से स्वरवर्णों को लिखे और पूर्वादि क्रम से कवर्गादि लिखे; ईशानकोण में 'ल' और 'क्ष' लिखे। कूर्मचक्र का स्वरूप इस प्रकार है–

(कूर्मचक्र)

	ईशानकोण	पूर्व	अग्निकोण	
	ल क्ष	क ख ग घ ङ	च छ ज झ ञ	
उत्तर	श ष स ह	अं अः | अ आ | इ ई ओ औ | | उ ऊ ए ऐ | ऌ ॡ | ऋ ॠ	ट ठ ड ढ ण	दक्षिण
	य र ल व	प फ ब भ म	त थ द ध न	
	वायव्यकोण	पश्चिम	नैर्ऋत्यकोण	

उपर्युक्त 9 कोष्ठों में जिसके अन्तर्गत क्षेत्र, नगर या स्थान के नाम का पहला अक्षर आता हो, उस कोष्ठ को मुख समझना चाहिये। उसके दोनों ओर के दो कोष्ठ भुजा, फिर दोनों ओर के दो कोष्ठ कुक्षि, फिर दोनों ओर के दो कोष्ठ पैर और शेष कोष्ठ को पुच्छ समझना चाहिये। मुखस्थान ही दीपक का स्थान निर्धारित किया गया है।

मुखस्थान में जप करने से सिद्धि प्राप्त होती है, भुजा में स्वल्पभोग, कुक्षि में उदासीनता, पैरों में दुःख और पीड़ा होती है।

मुखस्थो लभते सिद्धिं करस्थः स्वल्पभोगभाक्।
कुक्षिस्थित उदासीनः पादस्थो दुःखमाप्नुयात्।।
पुच्छस्थः पीड्यते मन्त्री बन्धनोच्चाटनादिभिः।
कूर्मचक्रमिदं प्रोक्तं मन्त्राणां सिद्धिसाधनम्।।

(अनुष्ठानप्रकाशः पृ. 37 तथा इसी आशय के श्लोक पुरश्चर्यार्णव पृ. 478 पर भी हैं)

कूर्मचक्र की आवश्यकता घर या बस्ती आदि अपवित्र स्थानों में होती है। पवित्र स्थानों जैसे कुरुक्षेत्र, प्रयाग, गंगासागरसंगम, महाकाल(उज्जैन एवं नासिक), काशी, त्र्यम्बक महाक्षेत्र, पर्वत, सिन्धुतीर अथवा नदीतट और पुण्य वनों में कूर्मचक्र की आवश्यकता नहीं होती।

कुरुक्षेत्रे प्रयागे च गङ्गासागरसंगमे।
महाकाले च काश्यां च कूर्म्मस्थानं न चिन्तयेत्।।
पर्वते सिन्धुतीरे वा पुण्यारण्ये नदीतटे।
यदि कुर्यात्पुरश्चर्य्यां तत्र कूर्म्मं न चिन्तयेत्।।
ग्रामे वा यदि वा वास्तौ गृहे तं च विचिन्तयेत्।

(अनुष्ठानप्रकाशः पृ. 37 तथा पुरश्चर्यार्णव पृ. 484)

(उपर्युक्त लेख कल्याण के 'साधनांक', मंत्रमहोदधिः तथा 'अनुष्ठानप्रकाशः' पर आधारित है।)

❀❀❀❀❀❀

व्यासजी मुनियों से कहते हैं-

मोहादधर्मं यः कृत्वा पुनः समनुतप्यते। मनःसमाधिसंयुक्तो न स सेवेत दुष्कृतम्।।
यथा यथा मनस्तस्य दुष्कृतं कर्म गर्हते। तथा तथा शरीरं तु तेनाधर्मेणमुच्यते।।
यथा यथा नरः सम्यगधर्ममनुभाषते। समाहितेन मनसा विमुञ्चति तथा तथा।।

(ब्रह्मपुराण 218/4-5, 7)

जो मोहवश अधर्म का अनुष्ठान कर लेने पर उसके लिये पुनः सच्चे हृदय से पश्चात्ताप करता और मन को एकाग्र रखता है, वह पाप का सेवन नहीं करता। ज्यों-ज्यों मनुष्य का मन पाप-कर्म की निन्दा करता है, त्यों-त्यों उसका शरीर उस अधर्म से दूर होता जाता है। मनुष्य जैसे-जैसे अपने अधर्म की बात बारबार प्रकट करता है, वैसे-ही-वैसे वह एकाग्रचित होकर अधर्म को छोड़ता जाता है।